

शिवजी के चार विलक्षण बेटे

लेखक

डा० श्रीराम आर्य

(खण्डन मण्डनात्मक साहित्य के प्रणेता)

सम्पादक

लाजपत राय अग्रवाल

(वैदिक मिशनरी)

प्रकाशक

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

शिवजी के चार विलक्षण बेटे

लेखक

आचार्य डा० श्रीराम आर्य
कासगंज (एटा) उ० प्र०

प्रकाशक

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

१०५८, विवेकानन्द नगर— गाजियाबाद—२०१००१ (उ०प्र०)

छठी बार प्रकाशित

सन् १९६६ ई०

मूल्य : ५ रुपये

टाईपोग्राफिक्स :

ब्राइटलाइन ग्राफिक्स, गाजियाबाद
फोन ७२४७९३

प्रकाशक :

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग
१०५८, विवेकानन्द नगर, गाजियाबाद
फोन ७०१०६५

॥ ओ३म् ॥

लेखक की ओर से

शंकर जी सम्पूर्ण हिन्दू देवताओं में सबसे बड़े एवं महापराक्रमी देवता माने जाते हैं। अनेक पुराण, उपपुराण उनकी प्रशंसा एवं उनके कार्य कलापों की गाथाओं से भरे पड़े हैं। शंकर जी की दो शादियों का वर्णन पुराणों में मिलता है। पहली शादी उनकी ब्रह्मा जी के पुत्र "दक्ष" प्रजापति की सुपुत्री सती से हुई बताई जाती है। सती ने जब पिता के यज्ञ में शंकर के लिए निन्दायुक्त वचन सुने तो अपना शरीर त्याग कर दिया था। तदुपरान्त शंकर जी सती के महान वियोग में चिरकाल तक व्याकुल रहे थे। सती ने दूसरा जन्म हिमालयराज की पत्नी "मैना" के गर्भ से पार्वती के रूप में लिया था उसने शंकर की घोर तपस्या की थी। शंकर जी ने उससे प्रसन्न होकर वर माँगने को कहा तो पार्वती ने शंकर से अपने साथ विवाह करने का प्रस्ताव रक्खा। शंकर जी ने उसे स्वीकार कर लिया तथा शंकर और पार्वती की शादी बड़ी धूमधाम के साथ बारात चढ़ाकर सम्पन्न हुई। इन दोनों शादियों में शंकर जी द्वारा सती व पार्वती के गर्भ से कोई सन्तान उत्पन्न न हो सकी। पार्वती को सन्तान न होने का भारी दुःख रहता था। उन्होंने अनेक प्रकार के उपाय सन्तान पैदा करने के लिए किए, बड़े-बड़े घोर तप भी किए, पर सब निष्फल रहे। यह सब होते हुए भी शिवजी के चार साक्षात् पुत्र माने जाते हैं। हम उन चारों पुत्रों की उत्पत्ति वाली संक्षिप्त कथाएँ पुराणों में से यथावत् उद्धृत करते हैं जिससे पाठकों को शिवजी महाराज की सन्तान का सही परिचय मिल सके।

निवेदक—

“श्रीराम आर्य”, कासगंज (उ०प्र०)

शिवजी के चार विलक्षण बेटे

शिवजी के प्रथम पुत्र "कार्तिकेय" की उत्पत्ति-

कैलाशमागत्य शिवा विवाह्य शोभां प्रपेदे नितशं शिवोऽपि।
विचारयामास च देवकृत्यं पीडां जनस्यापि च देव कृत्ये॥१९०॥

अथ शंभुर्महादेवी गृहीत्वा गिरिजा शिवाम्।

जगाम निर्जन स्थानं महादिव्यं मनोहरम्॥१९३॥

शय्यां रतिकरि कृत्वा पुष्प चन्दन चर्चिताम्।

अद्भुतां तत्र परमां भोगवस्त्वन्वितां शुभाम्॥१९४॥

स रेमे तत्र भगवाजशंभुर्गिरिजया सह।

सहस्र वर्ष पर्यन्तं देव मानेन मानदः॥१९५॥

दुर्गां गिस्पर्शमात्रेण लीलया मूर्छितः शिव।

मूर्छिता सा शिवस्पर्शदिबुद्धे न दिवा निशम्॥१९६॥

हरे भोग प्रवृत्ते तु लोक धर्म प्रवृत्तिनि।

महान्कालो व्यतीतायतयोः क्षण इवानधः॥१९७॥

अर्थ—पार्वती से विवाह रके कैलाश में आकर शिवजी भी बड़ी शोभा को प्राप्त हुए, और देवताओं के कार्यों का विचार करने लगे तथा देवताओं की पीडा का विचार किया ॥१९०॥ तब महादेव (शंकर) शिवा (गिरिजा) को विवाह करके महादिव्य मनोहर एकांत स्थान में गये ॥१९३॥ पुष्प चन्दन में चर्चित रति को बढ़ाने वाली सेज बनाकर जो बड़ी अद्भुत थी और जिसमें सम्पूर्ण भोग की वस्तुएं विद्यमान थीं ॥१९४॥ भगवान् शिवजी पार्वती सहित उस स्थान में रमण करने लगे और वह मान के देने वाले देवताओं के सहस्र वर्ष तक विहार करते रहे ॥१९५॥ दुर्गा (पार्वती) के अंग स्पर्श मात्र लीला से ही शिव मूर्छित हो गये और पार्वती भी शिव के अंग स्पर्श से मूर्छित हो गई और दिन रात कुछ नहीं जाना ॥१९६॥ जिस समय शिवजी भोग में प्रवृत्त हुए तब उनको बहुत लम्बा समय भी, क्षण मात्र के समान बीत गया ॥१९७॥

अथ सर्वे सुरास्तात एकत्री भूय चैकदा।
मंत्रयां चक्रुः रागत्य मेरौ शक पुरोगमाः॥ १८॥

सुराः उवाच :-

नोत्पन्नस्तनयस्तस्य न जानामोऽत्र कारणाम्।

विलंबः क्रियते तेन कथं देवेश्वरेण॥ २०॥

चिरज्ञात्वा तयोर्भोगं चिंतामापुस्सुराश्चते।

ब्रह्मणं मा पुरस्कृत्य ययुर्नारायणांतिकम्॥ २२॥

ब्रह्मोवाच :-

सहस्र वर्ष पर्यन्तं देव मानेन शंकरः ।

रती रतस्य निश्चेष्टो योगी बिरमते नहि॥ २४॥

भगवानुवाच :-

चिंता नास्ति जगद्धातस्सर्व भदंभविष्यति।

शरणं ब्रजदेवेश शंकरस्यमहा प्रभोः॥ २५॥

अर्थ—सब देवता एक समय में ही एकत्रित होकर इन्द्रादि के साथ सलाह करने लगे ॥ १८॥ **देवता बोले** — इन (शंकर-पार्वती) के अब तक कोई पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ इसका कारण हम नहीं जानते, देवेश्वर इसमें क्यों विलम्ब कर रहे हैं ? ॥ २०॥ उनका भोग बहुत समय का जानकर वे देवता चिन्ता करने लगे व मुझको आगे करके वे नारायण के समीप गए ॥२२॥ **ब्रह्मा जी बोले**—शिवजी देवताओं के सहस्र वर्ष पर्यन्त रति में रत हुए हैं, वह निश्चेष्ट योगी होकर विराम को प्राप्त नहीं होते ॥ २४॥ **भगवान बोले**—हे जगत के विधाता चिन्ता करने की कोई बात नहीं, सब कल्याण होगा। हे देवेश तुम महाप्रभु शंकर की शरण में जाओ ॥२५॥

दिव्यं वर्ष सहस्रं च शंभो संभोग कर्मतत्।

पूर्ण वर्ष सहस्रे च गत्वया तत्रसुरेश्वराः ॥ ४०॥

येन वीर्यं पतेद्भूमौ तत् करष्यथ निश्चितम् ।
तत्र वीर्यं च भविता स्कन्दनामा प्रभोस्सुतः ॥ ४१ ॥
अधुना स्वगृहं गच्छ विधे सुर गणैस्सह ।
करोतु शंभुरसं भोगं पार्वत्या स सनिर्जने ॥ ४२ ॥

अर्थ—यह शंकर के संभोग का क्रम दिव्य सहस्र वर्ष तक है। हे देवताओं ! जब सहस्र वर्ष पूर्ण हो जायें तब वहाँ जाकर ॥ ४० ॥ वह उपाय करना जिससे शंकर का वीर्य भूमि में पतित हो जाय, उस वीर्य से स्कन्द नाम वाला शंकर का एक पुत्र होगा ॥ ४१ ॥ हे विधाता ! इस समय देवताओं के साथ अपने स्थान को जाओ, शिवजी को पार्वती के साथ एकान्त में आनन्द करने दो ॥ ४२ ॥ इसके बाद समय बीतने पर सब देवता लोग ब्रह्मा व विष्णु के साथ शिवजी के स्थान कैलाश पर्वत पर गये।

तत्र दृष्ट्वा शिवं विष्णुं सुरैः विस्मितोऽभवत् ।
तत्र स्थितां शिवगणान् प्रपच्छ विनयान्वितः ॥ ५२ ॥

विष्णु उवाच :-

हे शंकराः शिवः कुत्र गतस्सर्व प्रभुर्गणाः ।
निवेदयत् नः प्रीत्या दुःखितान्बै कृपालवः ॥ ५३ ॥

शिवगणाः उवाच:-

सर्वेश्वरो महादेवी जगाम गिरिजालयम् ।
संस्थाप्य नोऽत्र सुप्रीत्या नाना लीला विशारदः ॥ ५६ ॥
तद्गुहाभ्यन्तरे शंभु किं करोति महेश्वरः ।
जानीमो रमानाथ व्यतीयुर्वहवस्समाः ॥ ५७ ॥

अर्थ—वहाँ विष्णु जी ने शिवजी को न देखकर देवताओं सहित बड़ा विस्मय माना और वहाँ स्थित हुए गणों से विनयपूर्वक पूछा ॥ ५२ ॥
विष्णु जी बोले :- हे शिव के सेवकों ! वह तुम्हारे प्रभु शंकर कहाँ हैं ?
(६)

तुम कृपा करने वाले हो, हम दुःखियों के समाचार उनसे कहो ॥ ५३ ॥
शिव गण बोले :- अनेक लीला करने में चतुर भगवान शंकर हम सबको यहाँ नियुक्त करके वे सर्वेश्वर, पार्वती मन्दिर (पार्वती निवास) में गये हैं ॥ ५६ ॥ सो महेश्वर शंकर घर के भीतर क्या करते हैं ? सो हम नहीं जानते, हे रामनाथ ! यहाँ हमको बहुत वर्ष बीत गये।

ब्रह्मोवाच :-

श्रुत्वेति वचनं तेषां स विष्णु स्सामरो मया ।
विस्मितोऽति मुनिश्रेष्ठ शिव द्वार जगामह ॥ ५८ ॥
तत्रगत्वा मया देवैस्स हरिर्देव बल्लभः ।
आर्तवाण्या मुने प्रोचे तारस्वरतया तदा ॥ ५९ ॥

(शिवपुराण कुमार खंड अध्याय १)

ब्रह्मोवाच तदाकर्ण्य महादेवो योगज्ञात विशारदः ।
त्यक्त कामो न तत्याजः संभोगं पार्वती भयात् ॥ ५९ ॥
आजगाम गृहद्वारि सुराणां निकटं शिवः ।
दैत्येन पीडितानां च शंकरो भक्त वत्सलः ॥ ६० ॥

शिवउवाच :-

यज्जातं तज्जातमेव प्रस्तुत शृणुताऽमराः ।
शिरस्तस्खलितं वीर्यं को ग्रहीष्यति मेऽधुना ॥ ६१ ॥
सग्रहणी यादिति प्रोच्य पातयामास तद्भुवि ।
अग्निर्भूत्वा कपोतो हि प्रेरितस्सर्व निर्जरैः ॥ ६० ॥
अभक्षच्छांभवं वीर्यं चच्चा तुनिखिलं तदा ।
एतस्मिन्नतरे तत्राऽऽजमाग गिरिजा मुने ॥ ५९ ॥

अर्थ—ब्रह्मा जी बोले :- विष्णु जी ने देवता और मेरे सहित यह वचन सुनकर हे मुनि श्रेष्ठ ! बड़े विस्मित होकर शंकर के द्वार पर गमन किया ॥ ५८ ॥ देवताओं के प्यारे हरि (विष्णु जी) मेरे साथ वहाँ जाकर ऊँची आर्तवाणी (उच्च स्वर) से शब्द सुनाने लगे ॥ ५९ ॥

(शिवपुराण कुमारखण्ड अध्याय १)

ब्रह्मा जी बोले :- योग ज्ञान में विशारद महादेव जी यह शब्द सुनकर भी त्यक्त काम होकर भी पार्वती के भय से संभोग को न त्यागते हुए ॥ १॥ घर के द्वारे देवताओं के निकट शिवजी आये, भक्त वत्सल शंकर ने उनको दैत्यों से पीड़ित देखा ॥ २॥ **शिवजी बोले :-** जो हुआ है वह होना ही था, अब इस समय, जो प्रस्तुत है सो सुनो, फिर से स्वलित हुए मेरे वीर्य को कौन ग्रहण करेगा ? ऐसा कह कर उसे पृथ्वी पर गिरा दिया तब देवताओं ने अग्नि को प्रेरणा की कि तुम कबूतर के रूप में इस वीर्य को ग्रहण करो ॥ १०॥ वह चौंच से शिवजी का समस्त वीर्य भक्षण कर गया ॥ हे मुनि ! उसी समय वहाँ पार्वती आ गई—

शिवागमविलम्बे च ददर्श सुरपुंगवान् ।
ज्ञात्वातद् कृतमखिलं महा क्रोधयुता शिवा ॥ १२ ॥
उवाच त्रिदशान् सर्वान् हरि प्रभृत्किंस्तदा ॥ १३ ॥
देव्युवाच । रे रे सुरगणास्सर्वे यूं दुष्टाविशेषतः ।
स्वार्थ संसाधका नित्यं तदर्थं पर दुःखदाः ॥ १४ ॥
स्वार्थ हेतोर्भहेशानमाराध्य परमं प्रभुम् ।
नष्टं चक्रुर्मद्विहारं बन्ध्याऽभवमहं सुराः ॥ १५ ॥
अद्यप्रभुतिं देवान् बन्ध्या भार्या भदन्त्विति ।
देवाश्च दुःखितास्सन्तु निखिला मद्विरोधिनः ॥ १६ ॥

अर्थ- वह इसलिये आई कि शिवजी के आगमन में विलम्ब हुआ परन्तु यहाँ यह सब वृत्तान्त देखकर महा क्रोधित हुई ॥ १२॥ और विष्णु आदि सब देवताओं को देखकर बोली ॥ १३॥ अरे देवताओं ! तुम बड़े दुष्ट हो, तुम स्वार्थ साधन करने वाले हो, और दूसरों को दुःख देते हो ॥ १४॥ स्वार्थ के निमित्त परम प्रभु शिवजी की आराधना करके मेरा विहार भंग किया, इस कारण मैं बन्ध्या हो गई ॥ १५॥ **पार्वती बोली:-** आज से सब देवताओं की स्त्रियाँ बाँझ हो जायेंगी और मेरे विरोधी सब देवता दुःख पावेंगे ॥ १६॥

ततोऽसहस्तद्वीर्यं पीडिताह्यभवन् सुराः ।
विष्णु, वादया निखिलाश्चाति शिवाऽऽज्ञानष्ट बुद्धयः ॥ २६ ॥
(८)

अथ विष्णु प्रभृत्किंस्त्वं देवा विमोहिताः ॥ २७ ॥
शिवालयस्य ते द्वारि गत्वा सर्वे विनम्रकाः ॥ २८ ॥

देवा उवाच :-

सगर्भाश्च वयं जाता दह्य मानाश्च रेतसा ।
तवशंभो गुरु कृपा निवारय दशामिमाम् ॥ ३० ॥
इत्या कर्ण्यऽमरनुति परमेशशिवापतिः ।
आजगाम द्रुतं द्वारि यत्र देवाः स्थिता मुने ॥ ३१ ॥

(शिवपुराण कुमार खंड अध्याय २)

अर्थ- तब उनके वीर्य को न सहने के कारण सब देवता पीड़ित हुए, विष्णु आदि सब देवताओं की यही दशा हुई, शिव की इच्छा से उनकी बुद्धि नष्ट हो गई ॥ २६॥ विष्णु आदि सब देवता मोहित होकर विनम्र होकर शिवजी के द्वार पर गये ॥ २७ और २८॥ **देवता बोले :-** हम सबको गर्भ रह गया है, आपके वीर्य से हम सब दग्ध होते हैं, हे शंकर । कृपा करके हमारी यह दशा निवारण कीजिए ॥ २०॥ यह सुनकर शिवजी अपने द्वार पर शीघ्रता से आए जहाँ पर सब देवता मौजूद थे ।

शिवजी का वीर्य पीने से सब देवताओं को गर्भ रह गया था

योऽयं देवाधि देवेशः कपर्दी नील लोहितः ।
तस्य रेतः सुराः पीत्वा गसर्भा विष्णुना सह ॥ ३६ ॥

(सौरपुराण अध्याय ५३ श्लोक ३६)

अर्थात्—शिवजी का वीर्य पान करने से विष्णु आदि सब देवताओं को गर्भ रह गया ।

शिवउवाच :-

हे हरे हे विधे देवास्सर्वे श्रुणुत सद्यः ।
मविष्यति सुखं वोऽद्य सावधाना भवन्तुहि ॥ ३६ ॥

(९)

एतद्वमत मदीर्य द्रुतमेवाऽखिलास्सुराः।
सुखिनस्तद्विशेषेण शासनान्मम सुप्रभोः॥ ३७॥

ब्रह्मोवाच :-

इत्याज्ञां शिरसाऽधाय विष्णुवाद्यास्सकलास्सुराः।
अकार्षुर्वमन शीघ्रं स्मरन्तश्शिवमव्ययम्॥ ३८॥
तच्छभुरेतरस्सवर्णाभं पर्वताकारमदर्भतं।
अभवत्पतितं भूमौस्पृदौमेवसुप्रभम्॥ ३९॥

शिवजी बोले :-

अर्थ- हे विष्णु ! हे ब्रह्मा ! हे सब देवताओं । हमारे वचन सुनो, तुमको सुख होगा, तुम सब सावधान हो जाओ ॥ ३६॥ हे देवताओं तुम सब बहुत शीघ्र हमारे शुक्र (वीर्य) को वमन कर दो, हे देव ! मेरे शासन से तुम शीघ्र सुखी होवोगे ॥ ३७॥ **ब्रह्माजी बोले :-** विष्णु आदि सब देवताओं ने इस प्रकार शंकर की आज्ञा को शिर पर धारण कर आदि नाशी शंकर का स्मरण करते हुए उस वीर्य को वमन कर दिया ॥ ३८॥ पृथ्वी पर गिरते ही वह शंकर का वीर्य स्वर्ण ॐ के समान चमकता हुआ पर्वताकार होकर स्वर्ग को स्पर्श करने लगा ॥ ३९॥

नोट : ॐ सनातन धर्म में इसी स्वर्ण को "मेरु पर्वत" के नाम से जाना जाता है ।

"लाजपत राय अग्रवाल"
(सम्पादक)

(१०)

अभवन्सुखिनस्सर्वे सुरास्सर्वेऽच्युतादयः ।
अस्तुवन् परमेशानं शंकरं भक्तवत्सलम्॥ ४०॥
पावकस्त्वभवन् नैव सुखी तत्र मुनीश्वरः।
तस्याज्ञांपरमोऽदाहै शंकर परमेश्वर ॥ ४१॥

अग्निरुवाच :-

देव देव महेशान मूढोऽहं तव सेवकः ।
क्षमस्वमेऽपराधं हि मम दाहं निवारयः॥ ४३॥

शिव उवाच :-

कस्याश्चित्सुस्त्रिया योनौ मदतस्त्यज यत्नतः ।
भविष्यसि सुखीत्वं हि निर्दाहात्मा विशेषतः॥ ४८॥

अर्थ- उस समय विष्णु आदि सब देवता सुखी हुए, और भक्त वत्सल परमेशान शंकर की स्तुति करने लगे ॥ ४०॥ हे मुनीश्वर ! परन्तु अग्नि प्रसन्न नहीं हुआ, उसे शंकर ने परम आज्ञा नहीं दी ॥ ४१॥ **अग्नि ने कहा-** हे देव ! महादेव !! मैं आपका सेवक अन्य सेवकों से बड़ा हूँ । मेरा अपराध क्षमा करके मेरा दाह निवारण करो ॥ ४३॥ **शिवजी बोले-** तुम यत्न पूर्वक इस मेरे वीर्य को किसी स्त्री की योनि में त्यागन करो तब तुम्हारा दाह मिट जावेगा और तुमको सुख प्राप्त होगा ॥ ४८॥

नारद उवाच :-

तपोमासस्नानकत्रयस्त्रियो यास्स्युः प्रगे शुचे ।
तद्देहेषु स्थापय त्वं शिवरेतस्त्वेदं महत्॥ ५४॥

ब्रह्मोवाच :-

तस्मिन्नवसरे तत्राऽगतास्सप्तमुनिस्त्रियः ।
तपोमासि स्नानकामाः प्रातस्सन्नियमामुने ॥ ५५॥

(११)

स्नानकृत्वास्त्रियस्ता हि महाशीताहिताश्चषट्।
 गन्तुकामा मुने याता वह्निज्वाला समीपतः॥ ५६॥
 तन्देतः कणिकास्सद्यस्तदेहान् विविशुर्मुने।
 रोमद्वाराऽखिलाबन्धिरभूदाह विवर्जितः॥ ५६॥
 दृष्ट्वा स्वस्त्रीगतिं तात नाथाः क्रोधाकुलाद्रुतम्।
 तत्पुत्रस्ताः स्त्रियस्तात सुसंमन्य परस्परम्॥ ६२॥
 अथताः षट्स्त्रियस्सर्वा दृष्ट्वा स्वव्यभिचारकम्।
 महादुःखान्वितास्ताताऽभवन्नाकुलमानसाः॥ ६३॥
 तत्पुत्रजुश्शिवरेतस्तदगभेरुपं मुनिस्त्रियः।
 ता हिमाचलपृष्ठेऽथाभवन् दाह विवर्जिताः॥ ६४॥
 असहश्चिवरेतस्तद्विमाद्विः कम्पमुद्वहन।
 गंगायां प्राक्षिपत्पूर्णमसह्यं दाहपीडितः॥ ६५॥
 गंगायाऽपिचतद्वीर्यं दुस्सहं परमात्मनः।
 निःक्षिप्तं हि शरस्तम्बे तरंगैः स्वैर्मुनीश्वरः॥ ६६॥
 पतितं तत्र द्रोतोद्भुतं बालो बभूवह।
 सुन्दरस्सुभगः श्रीमांस्तेजस्वी प्रीति वर्धनः॥ ६७॥

(शिवपुराण कुमारखण्ड अध्याय २)

अर्थ- स्नान करके उनमें से ६ स्त्रियाँ शीत से महाव्याकुल हुईं॥ ५५॥ हे मुने ! वे शीघ्रता से अग्नि की ज्वाला के समीप गईं॥ ५६॥ हे मुने ! अग्नि के तापते ही शिव वीर्य के कण उनके शरीर में रुएँ (रोम कूपों) के द्वार से प्रवेश कर गये, जिससे अग्नि का दाह निवृत्त हो गया॥ ५६॥ उन मुनियों ने उन स्त्रियों को इस प्रकार गर्भ युक्त देखकर क्रोध से व्याकुल हो उनको त्याग दिया॥ ६२॥ वे छहों स्त्रियाँ इस प्रकार अपना व्यभिचार देखकर महा दुःख से व्याकुल हो गईं॥ ६३॥ उन मुनियों की स्त्रियों ने गर्भ रूप उस शिव वीर्य को त्याग दिया, हिमालय के ऊपर उस वीर्य को त्याग कर वे सुखी हुईं॥ ६४॥ उस वीर्य को सहने की सामर्थ्य न रखने के कारण हिमालय कम्पित होने लगा, उस दाह को न सह सकने के कारण उसने उस वीर्य को गंगाजी में डाल दिया॥ ६५॥ गंगा भी शंकर के वीर्य को न सह सकी

और पीड़ित हो अपनी तरंगों से उस वीर्य को शरकण्डे के बन में त्यागन कर दिया॥ ६६॥ वहाँ वह वीर्य पतित होते ही तत्काल बालक बन गया जो सुन्दर सुभग, श्रीमान, तेजस्वी प्रीति का बढ़ाने वाला था॥ ६७॥

नोट- इसके छः मुँह थे। इस बालक का नाम "स्कन्द" व "कार्तिकेय" दोनों हैं पाठकों ने यह शिव वीर्य का विलक्षण चमत्कार और उससे शिवजी के पुत्र "कर्तिकेय" की पैदायश की अद्भुत कथा पढ़ी है। उक्त कथा में शिव पुत्र की विलक्षण पैदायश का विधान देखकर संसार के अकलमन्द लोगों के दिमाग भी चक्कर खाने लगेंगे। शिव का वीर्य पीने से देवताओं के गर्भ का रहना तथा ऋषि पत्नियों का गर्भवती बनना, शिव वीर्य मुँह से वमन करने से सोने का "मेरु पर्वत" बनना, औरतों के शिव वीर्य (गर्भ) को त्यागने से हिमालय व गंगा का दाह से दग्ध होना, वीर्य ही से लड़का बन जाना, पार्वती का क्रोधित होकर देवताओं की पत्नियों को बंध्या होने का शाप देना और किसी भी देवता के यहाँ उस शाप के प्रभाव से कभी औलाद न होना यह सब गप्पें पौराणिक धर्म के वास्तविक स्वरूप का भण्डाफोड़ करने के लिए काफी मजबूत प्रमाण हैं।*

टिप्पणी:- * उपरोक्त विवरण को पढ़कर आजकल के युग में कोई भी व्यक्ति क्या पुराणों को मानने के लिए तैयार होगा ? यह अनर्गल प्रलाप हिन्दु संस्कृति पर कुठाराघात नहीं है तो और क्या है ? महर्षि दयानन्द ने सच ही कहा था कि- "पुराणों के बनाने वाला गर्भ में ही क्यों नहीं नष्ट हो गया था ?" सभी पौराणिक पण्डे जिनकी अकल का दिवाला निकला पड़ा है जिन्हें देश धर्म व जाति के उत्थान से कोई मतलब नहीं है, इस प्रकार की गप्पें देवताओं के नाम पर सुना-सुना कर अपना उल्लू सीधा किया करते हैं !

"लाजपत राय अग्रवाल"

शिवजी के द्वितीय पुत्र गणेश की उत्पत्ति-

शंकर जी के द्वितीय पुत्र गणेश जी कहे जाते हैं। इनका सिर हाथी का है, लम्बी सूंड होती है बड़ा भारी स्थूल शरीर व पेट होता है, सर के अतिरिक्त शेष सम्पूर्ण शरीर मानव का होता है। इनकी हर काम के आरम्भ में सबसे पहिले पूजा की जाती है। कहा जाता है कि यह कल्याणकारी देवता हैं। इनका जन्म भी पार्वती की कोख से नहीं हुआ था। पुराण में इनकी जन्म कथा निम्न प्रकार दी है, इसकी भी जानकारी प्राप्त करिये-

एवं जाते सदा काले कदाचित्पार्वती शिवा।
विचिंत्य मनसा चेति परमाया परमेश्वरी ॥१८॥
मदीयस्सेवकः कश्चिद्भवेच्छुभतरः कृती।
मदाज्ञया परं नान्यद्रेखामात्रं चलेदिह ॥१९॥
विचार्येति च सा देवी वपुषोमल सम्भवम्।
पुरुषं निर्ममौ सा तु सर्व लक्षण संयुतम् ॥२०॥

गणेश उवाच :-

किं कार्य विद्यते तेद्य करवाणि तवोदितम्।
इत्युक्ता सा तदा तेन प्रत्युवाच सुत शिवा ॥२४॥

शिवोवाच :-

हे तात् ! शृणु मद्वाक्यं द्वारपालो भवाद्यमे ।
मत्पुत्रस्त्वं मदीयोऽसि नान्यथा कश्चिदास्तमे ॥२५॥
बिना मदाज्ञां मत्पुत्र नवायान्मद्गृहान्तरम् ।
कोऽपिक्वापि हठात्तात सत्यमेतन्मयोदितम् ॥२६॥

ब्रह्मोवाच :-

इत्युक्त्वा च ददौ तस्मै यष्टिं चाति दृढांमुने।
तदीयं रूपमालोक्य सुन्दरं हर्षमागता ॥ २७॥
मुखमार्चुव्य सुप्रीत्यालिंग्यतं कृपया सुतम्।
स्वद्वारि स्थापयामास यष्टि पाणिं गणाधिपम् ॥२८॥
स्वद्वारि स्थापयित्वा तं गणेशं स्वसुतं शिवा।
स्वयं च मज्जती सा वे सस्थितासीत्सखीयुता ॥३०॥

(१४)

अर्थ- एक समय पर माया परमेश्वरी पार्वती मन में कुछ समय विचार कर किं ॥ १८ ॥ कोई अत्यन्त श्रेष्ठ मेरा सेवक हो जो सब कार्य करे, जो मेरी आज्ञा के बिना रेखा मात्र भी चलायमान न हो ॥ १९ ॥ यह विचार कर पार्वती देवी ने अपने शरीर के मेल से सर्व लक्षण सम्पन्न एक पुरुष का निर्माण किया ॥ २० ॥ **गणेश जी बोले-** तुम्हारा क्या कार्य है ? मैं तुम्हारा क्या कार्य करूँ ? पुत्र के ऐसा कहने पर पार्वती बोली ॥ २४ ॥ **"देवी बोली"** हे तात- मेरे वचन सुनो, तुम मेरे पुत्र होने के कारण मेरे हो, दूसरे किसी के नहीं हो ॥ २५ ॥ हे पुत्र ! मेरी आज्ञा के बिना कोई मेरे घर के भीतर न आने पावे चाहे कोई कितनी भी हठ करे परन्तु अन्दर मत आने देना ॥ २६ ॥ **"ब्रह्मा जी बोले"** - हे मुने ! पार्वती ने ऐसा कहकर एक दृढ़ लकड़ी गणेश को दी, और गणेश जी का सुन्दर रूप देखकर बड़ी प्रसन्न हुई ॥ २७ ॥ और प्रेम से मुख चूमकर पुत्र को आलिंगन किया और गणेश जी को लकड़ी देकर द्वार पर (द्वारपाल के रूप में) बैठाया ॥ २८ ॥ शिवा (पार्वती जी) गणेश जी को अपने द्वार पर बैठाकर स्वयं अन्दर सखियों सहित स्नान करने लगी ॥ ३० ॥

एतस्मिन्नेव काले तु शिवो द्वारि समागतः।
कौतुकी मुनिशार्दूल नाना लीला विशारदः ॥३१॥
उवाच च शिवेश तमविज्ञाय गणाधिपः।
मातु राज्ञां बिना देव गम्यतां न त्वयाधुना ॥३२॥
मज्जनार्थं स्थिता माता क्वयासीतो ब्रजाधुना।
इत्युक्त्वा यष्टिकां तस्यरोधनाय तदाग्रहीत् ॥३३॥
तं दृष्ट्वा तु शिवः प्राह कं निषेधसि मूढधीः।
मान जानास्य सदबुद्धे शिवोहमितिनान्यथा ॥३४॥
ताडितस्तेन यष्टयाहि गणेशेन महेश्वरः।
प्रत्युवाच स तं पुत्रं बहुलीलाश्चकोपितः ॥३५॥

शिवोवाच :-

मूर्खोसि त्वं न जानासि शिवोहं गिरिजापतिः।
स्वगृहंयामि रे बाल निषेधसि कथं हिमाम् ॥३६॥
इत्युक्त्वा प्रविशतं तं महेशं गणनायकः।

(१५)

क्रोधं कृत्वा ततो विप्र दंडेनाताडयत्पुनः॥३७॥
ततश्शिवश्च संक्रुद्धो गणानाज्ञापयन्निजान्।
को वायंवर्तते किंच क्रियन्ते पश्यतां गणाः॥३८॥
इत्युक्त्वा तु शिवस्तत्र स्थितः क्रुद्धोहाद्विहिः॥३९॥

(शिवपुराण रुद्रसंहिता अध्याय १३)

अर्थ - इसी अवसर पर शिवजी भी द्वार पर आकर स्थित हुए। हे मुनिश्रेष्ठ ! अनेक लीला करने में चतुर वह कौतुकी भगवान् शंकर जब भीतर जाने लगे ॥ ३१ ॥ तब शिवजी को न जानकर वह गणेश्वर कहने लगा, हे देव ! माता की आज्ञा के बिना आप नहीं जा सकते ॥ ३२ ॥ माता इस समय स्नान कर रही है, तुम कहां जाते हो ? यहां से जाओ, यह कहकर गणेश जी ने उनको रोकने के लिये लकड़ी को उठाया ॥ ३३ ॥ यह देखकर शिवजी बोले, हे मूर्ख ! तू किसको निषेध करता है ? हे बुद्धिहीन ! तू मुझको नहीं जानता है, मैं शिव हूँ, इसमें अन्यथा नहीं है ॥ ३४ ॥ यह सुनकर गणेश ने महादेव पर लकड़ी का प्रहार किया, और वह बहुत लीला करने वाले क्रोध करके पुत्र से बोले ॥ ३५ ॥ **शिवजी बोले**- हे बालक ! तू मूर्ख है यह नहीं जानता है कि मैं गिरिजा पति शंकर हूँ, मैं अपने घर में ही जाता हूँ तू मुझे कैसे रोकता है ? ॥ ३६ ॥ यह कहकर जब गणेश जी की परवाह न करके शिवजी भीतर जाने लगे तब गणेश जी ने फिर उन पर डंडे का प्रहार किया ॥ ३७ ॥ क्रोध करके तब शिवजी ने अपने गणों को आज्ञा दी, यह कौन है, यहां क्यों स्थित है ? तुम देखो। हाय अब क्या करें ? ॥ ३८ ॥ यह कहकर शिवजी महा क्रोध करके बाहर ही स्थित हुए (अन्दर न जा सकें) ॥ ३९ ॥

नोट :- जब गणेश जी ने मार मार कर सारे शिवजी के गणों को भी भगा दिया तब शिवजी के आदेश से ब्रह्मा जी गणेश जी के पास गए।

(१६)

ब्रह्मोवाच :-

इत्या कर्ण्य प्रभोर्वाक्यं ज्ञात्वाऽज्ञान मोहितः।
तदीय निकटं तात सर्वैर्ऋषिवरैरयाम् ॥ ३० ॥
समायान्त च मां दृष्ट्वा स गणेशो महाबली।
क्रोधं कृत्वा समम्येत्य ममश्मश्रूष्यवाकिरत् ॥ ३१ ॥

(शिवपुराण रुद्रसंहिता कुमारखण्ड अध्याय १५)

युयुधेऽथ हरिस्तेन महाबल पराक्रमः।
महादेव्यायुधो वीरः प्रवणः शिवरूपकः ॥ ४ ॥
यष्टया गणाधिपस्सोथ जघानामर पुंगवान्।
हरिं च सहसा वीर शक्तिदत्तमहाबलः ॥ ५ ॥
अथ शक्तिसुतोवीरो वीर गत्या स्वयष्टितः।
प्रथमं पूजयामास विष्णुं सर्व सुखावहम् ॥ ११ ॥

अर्थ- ब्रह्मा जी बोले- शिवजी के वचन सुनकर अज्ञान से मोहित हो विशेष बात को न जानकर मैं उस बालक के निकट सब ऋषियों के साथ गया ॥ ३० ॥ वह महाबली गणेश मुझे आया हुआ देखकर क्रोध कर मेरी ओर दौड़ा और उसने मेरी दाढ़ी मूँछ नोंच ली ॥ ३१ ॥ तब महाबली बड़े पराक्रमी विष्णु जी उस बालक से युद्ध करने लगे। इस ओर वीरों में सर्व श्रेष्ठ शिवरूप बालक गणेश महादेवी के शस्त्र ॥ ४ ॥ यष्टि (लाठी) को लेकर देव गणों पर प्रहार करने लगे और शक्ति के दिये हुए आयुध से उस महावीर ने सहसा विष्णु के ऊपर लाठी का प्रहार किया ॥ ५ ॥ तब शक्ति के पुत्र गणेश ने वीरभाव को प्राप्त होकर अपनी यष्टि (लाठी) से प्रथम विष्णु की पूजा (अर्थात् उन पर प्रहार) किया ॥ ११ ॥

स ददर्शगतं शम्भुं शूल हस्तं महेश्वरम्।
हंतुं कामं निज वीरशिवापुत्रो महाबलः ॥ १८ ॥
शक्त्याजघान त हस्ते स्मृत्वा मातृपदाब्जम् ॥ १९ ॥
त्रिशूलं पतित हस्ताच्छिवस्य परमात्मनः।

(१७)

दृष्ट्वा सदूतिकस्तं वै पिनाकं धनुर्ददे॥२०॥
तमत्यपातं यद्भूमौ परिधेण गणेश्वरः।
हताः पञ्च तथा हस्ताः पञ्च भिश्शूलमाददे॥२१॥
पुनर्वीर वरशक्ति सुतस्समृत शिवो बली।
गृहीत्वा याष्ट मनुलां तथा विष्णुं जघानह॥२२॥
द्रुतमुत्थाय युयुधे शिवापुत्रेण तेन वै॥२३॥
एतदतर मासाद्य शूल पाणिस्तथोत्तरे।
आगत्य च त्रिशूलेन तच्छिरो निरकृतत्॥२४॥

(शिवपुराण रुद्रखण्ड अध्याय १६)

अर्थ- तब महाबली शिवपुत्र ने हाथ में त्रिशूल लिए महेश्वर शिवको अपने मारने को आते हुए देखा ॥ १८ ॥ तब गणेश जी ने अपनी माता के चरणों का स्मरण कर महादेव जी के हाथ में शक्ति का प्रहार किया ॥ १९ ॥ शक्ति के लगने से शिवजी के हाथ में से धनुष नीचे जमीन पर गिर पड़ा। तब यह देखकर उन्होंने पिनाक धनुष को धारण किया ॥ २० ॥ गणेश जी ने पारिध के द्वारा उसे भी पृथ्वी पर गिरा दिया ॥ २१ ॥ फिर वीरों में श्रेष्ठ महाबली शक्ति पुत्र ने शिव को स्मरण कर उस अतुल यष्टि (लाठी) को लेकर उससे विष्णु पर प्रहार किया ॥ २२ ॥ विष्णु जी उस चोट को न सहकर पृथ्वी पर गिर पड़े, और फिर शीघ्रता से उठ कर गणेश जी के साथ संग्राम करने लगे ॥ २३ ॥ इसी बीच में अवसर पाकर शिवजी ने बहुत शीघ्रता से उसके निकट जाकर त्रिशूल से उस बालक का सिर काट दिया ॥ २४ ॥

शिवोपितच्छिरश्चित्त्वा यावद्दुःखमुपाददे।
तावश्च गिरजा देवी चुक्रोधति मुनीश्वर॥२४॥
किं करोमिक्व गच्छामि हाहा दुःख मपागतम्।
कथं दुःख विनश्ये तास्याऽर्ति दुःख ममा पुना॥२५॥
मत्सुतो नाशितश्चाद्य देवैस्सर्वैर्गिणैस्तथा।
सर्वाम् स्तान्नाशविष्यामि प्रलयं वाकरोम्यहम्॥२६॥

(१८)

अर्थ- शिवजी गणराज (गणेश जी) का सिर काटकर जब तक कुछ दुःख पावे, हे मुनीश्वर ! तब तक पार्वती को बड़ा क्रोध आ गया ॥ २४ ॥ मैं क्या करूँ कहाँ जाऊँ, हा ! हा !! मुझे बड़ा दुःख प्राप्त हुआ है मुझे जो महान दुःख है मेरा वह दुःख किस प्रकार दूर हो सकता है ? ॥ २५ ॥ सब देवता और गणों ने मेरे पुत्र का नाश कर दिया है, सो मैं भी सबका नाश व प्रलय कर दूँगी।

ऋषयो हित्वदाद्याश्चगतास्ते वै शिवान्तिकम् ।

सर्वे प्रसादयामासुः क्रोधशान्त्यै तदा शिवाम् ॥३०॥

क्षंतव्यश्चापराधे वै सर्वेषां परमेश्वरी ।

सर्वे हि विकलाश्चाद्य शान्तिंतेषां शिवे कुरु ॥३६॥

ब्रह्मोवाच- इत्युक्त्वा ऋषयस्सर्वे सुदीनतर माकुलाः ।

संत स्थिरे चण्डिकाग्र कृतांजलि पुटारस्तदा ॥४०॥

एवं श्रुत्वा वचस्तेषां प्रसन्ना चण्डिकाऽभवत् ।

प्रत्युवाच ऋषीस्तान् वै करुणा विष्टमानसा ॥४१॥

देव्युवाच- मत्पुत्रो यदि जीवेत तदा संहरण न हि ।

यथाहि भवतां मध्ये पूज्योऽयं च भविष्यति ॥४२॥

सर्वाध्यक्षो भवेद्द्वयं यूयं कुरुत तद्यदि ।

तदा शान्तिर्भवेत्लोकं नान्यथा सुखमाप्स्यथ ॥४३॥

अर्थ- ब्रह्मा ने कहा- तब तुमको साथ लेकर सब ऋषि पार्वती के समीप गए, और क्रोध शान्ति के लिए शिवा को सब कोई प्रसन्न करने लगे ॥ ३० ॥ परमेश्वरी अब इन सबका अपराध क्षमा करो, हम सब ही व्याकुल हो रहे हैं, हमारी शान्ति करो ॥ ३६ ॥ ब्रह्मा बोले ! ऐसा कहकर सब देवता बड़ी दीनता से व्याकुल हो गए और हाथ जोड़ कर पार्वती के आगे खड़े हो गए और ॥ ४० ॥ तब उनके वचन सुनकर पार्वती प्रसन्न हुई और कृपा

(१९)

दृष्टि से देखती हुई मन में करुणा कर उन देवता ऋषियों से बोली ॥४१॥ देवी बोली-मेरा पुत्र यदि पुनः जीवित हो जाय और तुम सबके मध्य में वह प्रथम पूज्य बन कर रहे तो यह संहार नहीं होगा ॥४२॥ यदि तुम आज से सब देवताओं का इसको अध्यक्ष बना सको तो लोक में शान्ति होगी अन्यथा तुमको सुख नहीं मिलेगा ॥४३॥

ते च सर्वे तथा श्रुत्वा शंकराय न्यवेदयन् ॥४५॥

प्रोवाचेति सुराच्छ्रुत्वाशिवश्चापि तथा पुनः ।

कर्तव्यं च तथा सर्वलोकस्वास्थं भवेदिह ॥४६॥

उत्तरस्यां पुनर्यात प्रथमं यो मिले दिह ।

तच्छिरश्च समात्कृत्यं योजनीय कलेवरे ॥४७॥

ब्रह्मोवाच- ततस्तैस्तत्कृतं सर्व शिवाज्ञा प्रतिपालकैः ।

कलेवरं समानीय प्रक्षाल्य विधिच्चतू ॥४८॥

पूजयिस्वा पुनस्ते वै गताशयोदडः मुखास्तदा ।

प्रथम मिलितस्तत्र हस्ती चात्येकदन्तकः ॥४९॥

तच्छिरश्चतदानोत्वा तत्रतेऽयोजन्ध्रुवम् ।

संयोज्य देवतास्सर्वाः शिवं विष्णु विधितदा ॥५०॥

अर्थ- उन सब देवताओं ने पार्वती की बात सुनकर शंकर से यह बात कही ॥४५॥ देवताओं के यह वचन सुनकर शिवजी बोले, वह बात करनी चाहिये जिससे सब लोक का मंगल हो ॥४६॥ अच्छा, उत्तर दिशा को चले जाओ, इसमें जो सबसे पहले रास्ते में मिले उसी का सिर लाकर इस गणेश के धड़ (शरीर) में जोड़ देना चाहिये ॥४७॥ ब्रह्मा जी बोले- तब शिवजी की आज्ञा मान कर देवताओं ने यह किया कि वे उस कलेवर को लेकर उसे विधि पूर्वक प्रक्षालन (धो-साफ) करके ॥४८॥ और उसको पूजन करके वे उत्तर दिशा को गए, प्रथम उनको एक दाँत वाला हाथी मिला ॥४९॥

उन्होंने उसका सिर काट के लाकर गणेश जी के शरीर पर संयुक्त कर दिया। और उन्होंने शिव, विष्णु व ब्रह्मा को (सूचित कर दिया) ॥५०॥

इत्येवमभिमन्त्रेण मन्त्रितं जल मुत्तमम् ।

स्मृत्वा शिवं समेतास्ते विक्षिप्तस्तत्कलेवरे ॥५१॥

तज्जलस्पर्शमात्रेण चिद्यु तो जीवितो ध्रुवम् ।

तदोत्तस्थी सुप्त इव स बालश्च शिवेच्छया ॥५२॥

(शिवपुराण रुद्रसंहिता कुमारखण्ड अध्याय १७)

पार्वती उवाच-

धन्योसि कृत कृत्योसि पुर्वपूज्यो भवाधुना ।

सर्वेषाममराणां वै सर्वदा दुःख वर्जितः ॥५३॥

शिवोपि तस्य शिरसि दत्वास्वकर पंकजम् ।

उवाच वचनं देवान पुपोऽयमिति मेऽपरः ॥५४॥

तीनों देवता बोले-

वयं च प्राकृताश्चायं प्राकृतः पूज्य एव च ।

गणेशो विघ्नहर्ता हि सर्व काम फल प्रदः ॥५५॥

एतत्पूजापुरा कृत्वा पश्चात्पूज्या वयं नरैः ॥५६॥

(शिवपुराण रुद्रसंहिता कुमारखण्ड अध्याय १८)

अर्थ- इस प्रकार मन्त्र से जल को अभिमन्त्रित करके शिवको स्मरण कर उन देवताओं ने गणेश के शरीर पर जल छिड़का ॥५१॥ उस जल के स्पर्श मात्र से ही वह बालक शिवजी की इच्छा से सोते हुए के समान उठ बैठा ॥५२॥ पार्वती प्रसन्न होकर बोली-हे पुत्र ! तुम धन्य और कृतकृत्य हो, तुम सबके पूज्य होवोगे, तथा सब देवताओं से पूज्य होकर दुःख से वर्जित होवोगे, तथा ॥५३॥ शिवजी ने भी अपना कर कमल आशीर्वाद के रूप में बालक के सिर पर रखा और सब देवताओं से कहा कि "यह मेरा दूसरा पुत्र है" ॥५४॥

फिर तीनों देवता ब्रह्मा, विष्णु व महेश वर देते हुए बोले हम और यह गणेशजी सब मनुष्यों के प्रथम पूज्य होंगे और यह गणेश जी विशेष विघ्नहर्ता होंगे और सब कामनाओं एवं फलों के देने वाले होंगे।।२२।। सर्व प्रथम मनुष्य इन गणेशजी की पूजा किया करेंगे तत्पश्चात् बाद में हम लोगो की पूजा होगी।।२३।।

नोट- यह श्रीमान् स्थूलकाय गणेश जी महाराज की जन्म कथा पाठकों ने देखी है। इससे पहली कथा में शिव वीर्य का चमत्कार आपने देखा था तो इसमें श्रीमति पार्वती देवी के शरीर के मेल से बने मिट्टी के पुतले गणेश जी की पैदायश व उनकी बहादुरी का वृत्तान्त आपने पढ़ा है। साथ ही तीनों देवताओं की मरम्मत भी जो मिट्टी के पुतले ने की है वह भी देखी है। हमारे सनातन धर्म के इन चमत्कारों पर यदि कोई अक्ल वाला फिदा होकर ईमान न लावे तो उसको बद-किस्मत ही कहा जावेगा। दुनियाँ का कौन सा मजहब हमारे देवताओं की इन कहानियों के मुकाबले में अपनी कहानियाँ (गप्पें) पेश कर सकता है? पार्वती के जिस्म का मेल और उसका पुतला तो साक्षात् अछूत माना जाना चाहिये। शरीर के मेल को छूकर भी हाथ धोने पड़ते हैं। पर मेल का वही पुतला परम पवित्र व सबके लिए पूज्य बना दिया गया है। यह भी विलक्षण बात रही है कि जब पुतले का सर कट गया तो फिर उस धड़ पर वही कटा हुआ सर क्यों नहीं जोड़ा गया या किसी आदमी का सर क्यों न जोड़ा गया? जो देवता जगत के उत्पत्ति-पालन व प्रलयकर्ता माने जाते हैं वे एक धड़ के लिये मनुष्य का सर भी क्यों न बना सके? यह एक प्रश्न है जिसका उत्तर पौराणिक पंडितों को देना है। एक हाथी की हत्या कराकर उसका सर कटवा कर मनुष्य रूपधारी मेल के पुतले के धड़ पर जोड़कर (मनुष्य के धड़ में हाथी की कलम लगाकर) इन देवताओं ने अपने को हास्य का पात्र बनाया है। क्या ऐसी विलक्षण प्रकार

की उत्पत्ति वाला भी देवता व पूज्य माना जा सकता है? यह सब शेखचिल्ली के जैसी कहानियाँ गढ़-गढ़ कर पौराणिक पण्डितों ने मेरी हिन्दु कोम को धर्म के नाम पर किस कदर बेवकूफ बनाया है और ईश्वर से विमुख किया है, पाठक इन बातों पर स्वयं विचार करें।

शिवजी के तीसरे पुत्र “शुक्राचार्य” की पैदायश

अब शंकर जी के तीसरे विलक्षण पुत्र की कथा भी सुने।

अन्धक नामी दैत्य से शिवजी की सेना का घोर संग्राम चल रहा था। मारे हुए दैत्य गुरु शुक्राचार्य जी अपनी संजीवनी विद्या से पुनः तत्काल जीवित कर देते थे, इससे शंकर के पक्ष में घोर असंतोष व परेशानी व्याप्त हो रही थी। शिवजी ने युक्ति पूर्वक शुक्राचार्य जी को पकड़वाकर मंगा लिया। इस सम्बन्ध में निम्न प्रकार विवरण शिव पुराण में दिया गया है—

नन्दी उवाच-

अयं स शुक्रो भगवन्नितीदं निवेदयामास भवाय शीघ्रम्।

जग्राह शुक्रं स च देवदेवो यथो पहारं शुचिना प्रदत्तम्।।५२।।

न किंचिदुक्त्वा स हि भूतगोप्ता चिक्षेपवक्त्रे फलवत्कवीन्द्रम्।

हाहारवस्त्रैरसुरैस्समस्तै रुच्यै विमुक्तोहहेति भूरि।।५३।।

(शिवपुराण रुद्रसंहिता कुमारखण्ड अध्याय ४७)

नन्दी बोले- हे भगवन्! यह वही शुक्र है, इस प्रकार शिवजी से शीघ्र निवेदन किया, तब देवों के देव शिवजी ने, पवित्र मनुष्य से दी हुई भेंट के समान उन शुक्र को ग्रहण किया।।५२।। प्राणियों की रक्षा करने वाले शिवजी ने कुछ न कहकर ऊँचे स्वर से हाहाकार करते हुए सम्पूर्ण दैत्यों के छूटने पर भी उस शुक्र को फल के समान अपने मुँह में रख लिया।।५३।।

ततः कोलाहलो जातः प्रथमा सुर सैन्ययोः।

तेन शब्देन महता शुक्रशशभू दरे स्थितः।।३६।।

छिद्रान्वेषी भ्रमन्सोव विनिकेतो यथा निलः ॥३७॥

अर्थ-उस समय प्रथम तो देवता व दैत्यों की सेना में बैड़ा कोलाहल हुआ, उस बड़े शब्द से शिव के पेट में स्थित खुद शुक्राचार्य जी ॥३६॥ छिद्र खोजते हुए चारों ओर फिरने लगे, जिस प्रकार आधार रहित पवन फिरता है ॥३७॥

स वर्षाणां शतं कुक्षौ भवस्य परितो भ्रमन् ।

न तस्य दद्रशे रंघं शुचे रंघं खलो यथा ॥३६॥

शांभवेनाथ योगेन शुक्र रूपेण भार्गवः ।

इमं मंत्रवरं जप्त्वा शंभोर्जठर पंजरात् ॥३७॥

निष्क्रान्तं लिंग मार्गेण प्रणाम ततश्शिवम् ।

गौर्या गृहीतः पुत्रार्थं तद्विहनेश्वरी कृतः ॥३८॥

अथ काव्यं विनिष्क्रान्तं शुक्रमार्गेण भार्गवम् ।

दृष्टोवाच महेशानो विहस्य करुणानिधिः ॥३९॥

महेश्वर उवाच-

शुक्रवन्निस्सृतो यस्माल्लिगान्मे भृगुनन्दन ।

कर्मणा तेन शक्रस्त्वं ममपुत्रोसि गम्यतान् ॥४०॥

(शिवपुराण रुद्रसंहिता कुमारखण्ड अध्याय ४८)

अर्थ- उन शुक्र ने १०० वर्ष पर्यन्त शिव के उदर में चारों ओर भ्रमण करते हुए उसमें सुराख नहीं देखा जैसे खल को पुण्यात्मा में खोजने पर भी दोष नहीं मिलता ॥३६॥ फिर वह भार्गव शिव के दिये योग से मन्त्र को जप के शिव वीर्य रूप में शिव जी के उदर पंजर से ॥३७॥ उपस्थेन्द्रिय के मार्ग से निकले, और शिवजी को प्रणाम किया, तब पार्वती ने उसको पुत्र रूप से ग्रहण किया, और विघ्न रहित किया ॥३८॥ उपस्थेन्द्रिय में से वीर्य रूप से निकले हुए शुक्र को देखकर दया सागर शिवजी हँस कर बोले

(२४)

॥३९॥ शिवजी बोले- हे भृगु के पुत्र ! जिस कारण कि तुम मेरी उपस्थेन्द्रिय से वीर्य रूप से निकले हो, इस कर्म से तुम "शुक्र नाम वाले मेरे तीसरे पुत्र हुए"—अब जाओ ॥४०॥

इस प्रकार शिवजी की तीसरी सन्तान भी विलक्षण प्रकार से उत्पन्न हुई थी। पाठकों ने गत पृष्ठों में "स्वामी कार्तिकेय" व "गणेश जी" की भी उत्पत्ति के विलक्षण प्रकार देखे हैं। "इनसे ज्ञात होता है कि शंकर जी व पार्वती के संयोग से प्राकृतिक तरीके से कोई भी सन्तान कभी पैदा नहीं हुई।" पार्वती जी को इसका सदैव दुःख रहा करता था। गणेश जी को देह मैल का पुतला बनाकर लड़का बनाया गया तो कार्तिकेय को भी पार्वती उदर में धारण करके मातृत्व के सुख की अनुभूति न कर सकी, अतः पार्वती जी ने सन्तान प्राप्ति के लिए घोर तप करने प्रारम्भ किये, बड़े-बड़े कठोर व्रत धारण किये, फिर भी वे एक भी सन्तान को अपनी कोख से जन्म देने में समर्थ न हो सकीं। यह तो कोई उनका भक्त पौराणिक वैद्य ही बता सकेगा कि महादेव जी के सन्तान न होने में शारीरिक (नपुंसकता का) दोष उनमें था या उनकी पत्नी पार्वती में ? अथवा किसी में भाग्य दोष हो तो शायद कोई पौराणिक ज्योतिषि अन्दाज लगा सकेंगे कि आखिर शिव व पार्वती नैसर्गिक रूप से सन्तान को क्यों नहीं पा सकें ?

हमारा उद्देश्य यहाँ सन्तान न होने के कारणों की विवेचना करना नहीं है। हमको तो शिवजी महाराज की मानी हुई सन्तानों की उत्पत्ति का विधान शिव पुराण में से दिखाना है। ताकि पाठक शंकर जी की सन्तानों के बारे में कुछ जानकारी प्राप्त कर सकें।

(२५)

शिव जी का चौथा पुत्र "अन्धक"

पूर्वे दिशो मन्दर शैल संस्था कपदिननश्चैव पराक्रमस्य ।
चक्रे ततो नेत्र निमीलनं तु सा पार्वती नर्म युतं सलीलम् ॥१६॥
प्रवालहेमाब्जघृतप्रभाभ्यां कराम्बुजाभ्यां निमिमिल नेत्र ।
हरस्य नेत्रेषु निमीलितेषु क्षणेन जातः सुमहान्धकारः ॥१७॥
तात्पर्यं योगाच्च महेश्वरस्य करौ च तस्याः स्खलित मदांभः ।
शंभोर्ललाटे क्षणवन्धितप्तो विनिर्गतौभूरि जलस्य बिन्दुः ॥१८॥
गर्भोबभूवाथ कराल वक्रो भयंकरः क्रोध परः कृतघ्नः ।
अन्धे विरूपो जटिलश्च कृष्णो नरेतरो वैकृतकिस्सुरोमा ॥१९॥
गायन्हसन्प्ररुदन्त्यमानो विलेलिहानो घोर घोर घोषः ।
जातेन तेनाद्भुतदर्शनेन गौरी भवोऽसौस्मित पूर्व माह ॥२०॥

अर्थ- जिस समय परम पराक्रमी शिवजी मन्दर पर्वत की पूर्व दिशा में विराजमान थे उस समय हँसी से पार्वती ने अपने हाथों से उनके दोनों नेत्र मूँद लिये ॥१६॥ जिस समय मूँगें स्वर्ण के कमल को प्रभा वाले दोनों हाथों से पार्वती ने शिवजी के दोनों नेत्र मूँद लिये उस समय शिवजी के नेत्र मूँदने पर महा अंधकार हो गया ॥१७॥ महेश्वर के शरीर स्पर्श करने से पार्वती के हाथों से मद का जल निकलने लगा । कारण यह है कि शिवजी के माथे की अग्नि से तृप्त होकर बहुत से जल के बिन्दु टपकने लगे ॥१८॥ उसी समय बड़ा विकराल मुख भयंकर क्रोध परायण एक पुरुष, जोकि जंघा विरूप, जटाधरी कृष्ण वर्ण (काले रंग का) विकृत तथा बहुत से रोमों वाला मनुष्य से कुछ भिन्न उत्पन्न हुआ ॥१९॥ वह गाने, हँसने, नाचने,

रोने, जीम से चाटने और महाघोर शोर करने लगा, उस अद्भुत दृश्य के उत्पन्न होते ही पार्वती को आश्चर्य पूर्वक देखकर शिवजी, हँसते हुए बोले ॥२०॥

निमील्य नेत्राणि कृतं च कर्म विभोषिषाऽस्मादयिते कथंत्वम् ।
गौरीहरात्तद्वचनं निशम्य विहस्यमाना प्रभुमौच नेत्रे ॥२१॥
जाते प्रकाशे सति घोर रूपो जातोऽधकारादपि नेत्रहीनः ।
तादृग्विघ्नात् च निरीक्ष्यभूतं प्रपच्छ गौरीपुरुषं महेशम् ॥२२॥

गौरी उवाच :-

कोयं विरूपो भगवन्ति जातो नावग्रतो घोर भयंकरश्च ।
वदस्व सत्यं मम किं निमित्तं सृष्टोऽयिवाकेन च कस्य पुत्रः ॥२३॥

महेश उवाच :-

श्रण्विकेह्यद्भुतवृत्तकारे उत्पन्न एषोऽद्भुत चत्तवीर्यः ।
निमीलिते चक्षुषिमे भवत्या स स्वेदजोमंघाकनाम धेयः ॥२५॥
गौरी ततो श्रत्यवचो निशम्य कारुण्य भावात्सहिता सखीभिः ।
नाना प्रकारैर्बहुभिर्हा पायैश्चकार रक्षां स्वसुतस्य यद्वत् ॥२७॥

शिवजी बोले- आंखे मीच कर जो कर्म किया हैं, हे गौरी ! फिर तू उससे डरती क्यों है? पार्वती ने शिवजी के वचन सुन कर हँसते हुए नेत्रों से हाथ उठा लिया ॥२१॥ प्रकाश होने पर वह घोर रूप अन्धकार से भी विशेष प्रतीत हुआ, इस प्रकार से उस प्राणी को देख कर उस पुरुष के विषय में पार्वती शिवजी से पूछने लगी ॥२२॥ **गौरी बोली-** हे भगवान ! हम दोनों के आगे यह घोर पुरुष कौन उत्पन्न हुआ है ? आप सत्य कहिये इसे आपने किस लिए उत्पन्न किया है ? और यह किसका पुत्र है ? ॥२३॥ **शिवजी बोले -** हे चंडिके ! हे अद्भुत चरित्र करने वाली ! यह अद्भुत पराक्रमी उत्पन्न हुआ है, तुमने जो मेरे नेत्र मूँद लिए सो उस पसीने के पड़ने

से यह “अन्धक” नाम का पुरुष उत्पन्न हुआ है। तब इस प्रकार गौरी ने उसके वचन सुनकर सखियों के सहित करुणा के भाव से अनेक प्रकार के उपायों द्वारा उस अपने पुत्र की रक्षा का प्रबन्ध किया ॥१२७॥

नोट- इसके बाद लिखा है कि हिरण्याक्ष दैत्य के कोई पुत्र न था वह घोर तप करने लगा तब शिवजी ने प्रकट होकर उससे वर माँगने को कहा—

हिरण्याक्ष उवाच :-

पुत्रस्तु मे चन्द्रललाट नास्ति सुवीर्यवान्दैत्यकुलानुरूपी।
तदर्थं मेतद्व्रतमास्थिऽहंतं देहिदेवेश सुवीर्यवन्तम् ॥१३६॥

सनत्कुमार उवाच :-

एतद्भवस्तद्वचनं निशम्य कृपा करो दैत्यनृपस्यतुष्टः ।

शिव उवाच :-

तमाह दैत्यातपनास्ति पुत्र स्वर्द्धीर्यजः किन्तु ददामि पुत्रम् ॥१३८॥
ममात्मजं त्वंधक नामधेयैतत्तुल्यवीर्यं त्वपराजितं च ।
वृणीष्व पुत्रं सकल विहाय दुःखं प्रतीच्छत्व सुतं त्वमेव ॥१३६॥
इत्येव मुक्त्वा प्रददौ स तस्मै हिरण्यमेत्राय सुतं प्रसन्नः ।
हरस्तु गौर्या सहितो महात्मा भूतादिनाथस्त्रिपुरारि रुद्र ॥१४०॥

(शिवपुराण रुद्रसंहिता कुमारखण्ड अध्याय ४२)

हिरण्याक्ष बोला- हे चन्द्रशेखर ! मेरे कोई पुत्र नहीं है, जो वीर्यवान् दैत्य कुल के अनुरूप हो, उसी के लिए मैं इस व्रत में स्थित हुआ हूँ, हे देवेश ! आप मुझे वीर्यवान् पुत्र दीजिये ॥१३६॥ **सनत्कुमार जी बोले-** शिवजी उस दैत्य के वचन सुनकर कृपाकर उस दैत्यश्वर से बोले, हे दैत्यराज ! तुम्हारे भाग्य में तुम्हारे वीर्य से कोई पुत्र नहीं है तो भी मैं तुमको पुत्र देता हूँ ॥१३८॥ एक मेरा पुत्र “अन्धक” नाम वाला, तेरे तुल्य वीर्य और पराक्रम वाला है

(२८)

उस पुत्र को माँग ले ॥१३६॥ यह वचन कहकर प्रसन्न होकर भूतों के नाथ त्रिपुर के उग्र दुश्मन गौरी सहित शंकर ने प्रसन्नता से उसको पुत्र प्रदान किया ॥१४०॥

नोट- उसी हिरण्याक्ष को विष्णु ने बाराह (शूकर) रूप धरण करके मारा था उसके बड़े भाई हिरण्यकश्यप को विष्णु ने नृसिंह अवतार लेकर मारा था। इस अन्धक को हिरण्याक्ष के मरने पर राजगद्दी दी गई थी। आगे कथा दी है कि अन्धक को उसके दूतों ने बताया कि शिवजी की स्त्री पार्वती राजभवन में सबसे सुन्दरी है। अन्धक ने शिवजी से पार्वती को मांगा तो शिवजी ने उसे देने से इन्कार कर दिया। इस पर दोनों में महाघोर संग्राम होने लगा। बहुत लम्बे युद्ध के बाद शंकर जी ने अन्धक को मार डाला।

(यह सम्पूर्ण कथा शिवपुराण रुद्रसंहिता युद्ध खण्ड अध्याय २२ से ४६ तक दी गई है)

भयंकर दुर्घटना

शंकरजी द्वारा अन्धक के पुत्र का (अपने पौत्र) का वध

एक बार शंकर जी ने पार्वती से हंसी में कहा कि तू काली कलूटी है। पार्वती जी ने इस कटाक्ष (रिमार्क) को शंकर जी द्वारा अपना अपमान अनुभव किया तथा अप्रसन्न होकर यह कहकर तप करने चली गई कि अब मैं ब्रह्माजी की उपासना करके गोरी बनकर ही वापिस लौटूंगी। इसी दौरान मैं अन्धक के पुत्र “आडि” ने विचार किया कि शंकर जी ने मेरे पिता का वध किया है अतः मुझे शंकर जी से पिता की मृत्यु का बदला चुकाना चाहिये। यह विचार करके वह शंकर जी के पास गया। वहाँ उसे ज्ञात हुआ कि पार्वती वहाँ नहीं है। अतः उसने पार्वती का रूप बना लिया।

यह कथा विस्तार से मत्स्य पुराण अध्याय १५४ व १५५ में दी गई है इसी सम्बन्ध में वहाँ आगे लिखा है :-

(२९)

कृत्वोमारूपसंस्थानं गतो दैत्योहरान्तिकम् ।
 पायोरम्याकृतिश्चित्र भूषणाम्बर भूषितः ॥२७॥
 तदृष्ट्वागिरिशरतुष्टस्तदालिङ्ग्य महासुरम् ।
 मन्यमानो गिरिसुतां सर्वैरव यवान्तरैः ॥२८॥
 अपृच्छत् साधुते भावोगिरिपुत्रि ! न कृतिमः ।
 यां त्वं मदाशयं ज्ञात्वा प्राप्तेह वर वर्णिनि ॥२९॥
 त्वया विरहतं शून्यं मन्यमानो जगत्रयम् ।
 प्राप्ता प्रसन्न वदना युक्तमेव विधत्स्वपि ॥३०॥
 इत्युक्तोदानवेन्द्रस्तु तदाभाषतस्मयंश्छनैः ।
 नचाबुध्यदभिज्ञानं प्रायस्त्रिपुर घटिनः ॥३१॥

देव्युवाच :-

यातास्म्यहं तपश्चतुर् बलभ्यायत वातुलम् ।
 रतिश्चतत्रमेना भूततः प्राप्तात्व दन्तिकम् ॥३२॥
 इत्युक्तः शंकरः शंकां काश्चित् प्राप्यावधरयत् ।
 हृदयेन समाधय देवः प्रहसिताननः ॥३३॥
 कुपीता मथि तन्वंगी प्रकृत्या च दृढव्रता ।
 अप्राप्त कामा सम्प्राप्ता किमेतत् संशयोमम् ॥३४॥
 इति चिन्त्य हरस्तस्या अभिज्ञानं विधरयन् ।
 ना पश्यद्वाम पार्श्वे तु तदङ्गे पद्य लक्षणम् ॥३५॥
 लोमा वर्तन्तु रचितं ततो देवः पिनाकधृक् ।
 अबुध्यद्दानवी माया माकारं गूहयंस्ततः ॥३६॥
 मेढ्रे बज्रास्त्र मादायदानवंतम् शातयत् ।
 अबुध्यद्दीरकोनैव दानवेन्द्रं निषूदितम् ॥३७॥

(मतस्यपुराण अध्याय १५५)

अर्थ :- (आडि) पार्वती का रूप धारण कर सुन्दर अङ्गों में आभूषण और कृत्रिम वस्त्रों को पहिन कर शिवजी के पास गया ॥२७॥ तब उस महा अंसुर को देखकर शिवजी प्रसन्न होकर उसे पार्वती समझकर यह वचन बोले कि हे पार्वती ! तेरा स्वभाव अच्छा है, इसमें कुछ छल तो नहीं है ? क्या तू मेरा मनोरथ जानकर मेरे पास आई है? तेरे विरह में मैंने सब जगत शून्य मान रखा है। अब तू मेरे पास आ गई, यह तूने बहुत अच्छा किया ॥२८-३०॥ ऐसे कहता हुआ वह दैत्य हंसकर शिवजी के प्रभाव को नहीं जानता हुआ शनैः-शनैः यह वचन बोला ॥२९॥ अर्थात् वह पार्वती रूपी दैत्य बोला कि मैं तप करने के निमित्त गई थी। वहाँ तुम्हारे बिना मेरा चित्त नहीं लगा इस कारण तुम्हारे पास वापिस चली आई हूँ ॥३१॥ ऐसे वचन सुनकर शिवजी कुछ शंका का विचार कर हृदय में समाधान कर हंसकर बोले ॥३३॥ हे तन्वंगि ! तू मेरे ऊपर क्रोधित हो गई थी और दृढ़ विचार करके चली थी तो अब प्रयोजन बिना सिद्ध किए कैसे वापिस चली आई ? यह मुझको संदेह है ॥३४॥ यह कहते हुए शिवजी उसके लक्षणों को देखने लगे। तब उसकी बाँई बाजू में कमल का चिन्ह नहीं पाया ॥३५॥ उस समय महादेव जी ने उस दानवी माया को जानकर अपनी लिंग (उपरस्थेन्द्रि) पर बज्रास्त्र को रखकर उसके संग रमण (भोग)करके उसको मार डाला ॥३६-३७॥

इस प्रकार शिवजी महाराज ने अपने ही पुत्र अन्धक के लड़के (अपने खास नाती) का विचित्र ढंग से वध करके उसके वंश का नाश कर दिया।

शत्रु को मारने की शंकर की शैली कहीं देश में परम्परा न बन जावे, अतः हम चेतावनी देना उचित समझते हैं कि यह शैली (तरीका) भारतीय दण्ड विधान I.P.C. के अनुसार दण्डनीय है अतः कोई भी शिव भक्त इसका अनुकरण न करें। शुक्राचार्य का जन्म व आडि वध शंकर जी के जीवन की विलक्षण घटनाओं में से केवल दो उदाहरण हैं। यह उदाहरण केवल

जानकारी प्राप्त करने के लिए हैं, अनुकरण करने के लिए नहीं। हमारे द्वारा अनेकों मत मतान्तरों पर अनेकों पुस्तकें लिखी गई हैं जो "अमर प्रकाशन विभाग— गाजियाबाद—२०१००१ (३० प्र०) के अन्तर्गत प्रकाशित कराई गई है " जिनमें हर तरह से अन्ध विश्वासों को दर्शाया गया है। तथा देश, समाज व व्यक्ति के हित में क्या हैं ? उन उल्लेख किया गया है, पाठक गण वहाँ से सम्पर्क कर सकते हैं।

“आचार्य डा० श्रीराम आर्य”

कासगंज (एटा) उ० प्र०

टिप्पणी - माननीय डा० साहब द्वारा लगभग एक सौ से अधिक पुस्तकें विभिन्न विषयों पर शोध रूप में लिखी जा चुकी है, जिनमें से ज्यादातर प्रकाशित हो चुकी है कुछ प्रकाशित की जा रही है।

आप प्रकाशन से सम्पर्क स्थापित करें।

निवेदक

लाजपतराय अग्रवाल

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

१०५८, विवेकानन्द नगर— गाजियाबाद —२०१ ००१(३० प्र०)

(दूरभाष : ०५७५— ७०१०६५)